बैगा जनजाति में ''गोदना'' शिल्प एवं परम्पराएं

डॉ.राकेश चंदेल, सहा. प्राध्यापक इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कवर्धा, छत्तीसगढ़

बैगा मध्य भारत की अत्यंत अल्पविकसित, प्रीमिटिव, जनजातियों में से एक है, बैगा द्रविड़ समूह की एक पिछड़ी जनजाति है। यह जनजाति भारत की पुरातन प्रजातियों में से एक है। इनका निवास मध्यप्रदेश में मंडला, बालाघाट, डिंडौरी, शहडोल तथा छत्तीसगढ़ में बिलासपुर, मुंगेली, कवर्धा एवं राजनांदगांव जिला में मैकल पर्वत श्रृंखला पर है। बैगा जनजाति छोटा नागपुर की भुईयां जनजाति का प्रशाखा मानी जाती है। इस जनजाति में स्त्री-पुरूष विशेष अवसरों (नृत्य, मेले, उत्सव) पर झाली, कलगी, टिसकी, चटकुटिया, हवेल, सुविया, कंकन, पैजन, ककई, तार, कुलिया, लटकन आदि तथा पुरूष लंगोटी, कपरा, पगरी, गदली, पिछौरी आदि वस्त्रों एवं जेवरों को पहनते हैं। बैगा शिल्पांकन हमें उनके घरों के दीवारों में, विवाह एवं अन्य समारोह में तथा गोदना शिल्प व चित्रकारी के रूप में दिखाई देता है। यह जनजाति बालों की सुंदरता के लिये मिट्टी लगाकर धोते हैं। स्त्रियां बालों सज्जा के लिये ककई, फुंदरा, लाछा का प्रयोग करती है। कानों में बारी, गर्दन में गांठी, पैर में जुड़ा पहनने की प्रथा है।

गृह अलंकरण – बैगा घरों की दीवारों पर सौंदर्यात्मक अलंकरण बनाते हैं। मुख्य द्वार के आसपास गेरू व काजल से दोहरी मोटी रेखाएं उकरते हैं। दरवाजे व चौखट पर भी इसी तरह अलंकृत करते हैं। नया मकान बनाते समय दीवारों पर मिट्टी से नहडोरा बनाते हैं। दीपक रखने हेतु बरेंडा प्रायः सभी घर में मिलता है। पशु-पक्षियों की आकृतियां बनाई जाती है, बेलबुटे, फुलपत्तियां महिलाओं के द्वारा बनाये जाते हैं। ये कलात्मक अभिप्राय जहां घर का सौंदर्य बढ़ाते हैं, वहीं मिट्टी की कला परंपरा का पोषण भी करते हैं।

विवाह अलंकरण –विवाह में महिलाएं चांवल के आंटे, हल्दी से चौक पुरती हैं। रंगीन बारिक मोतियों से महिलाएं गले की सुंदर मालाएं बनाती हैं। कंघी, बांस की टोकरियां, डाली, ओड़ी, चोलगी, बैगा पुरूष बनाते हैं। विवाह के लिये सजन या मगरोही लकड़ी की कारीगरी का श्रेष्ठ नमुना है। चार वृक्ष की लकड़ी से स्वाहा या बैगा, बढ़ई सजन करता है। दूल्हा-दुल्हन इसी सजन में भांवर करते हैं।

गोदना – सौंदर्य वृद्धि के लिये आदिवासी संस्कृति में अंग आलेखन एवं चित्रांकन की परंपरा ''गोदना'' अनेक आस्थाओं से जुड़ी है। गोदना आदिवासी ललनाओं का श्रृंगार ही नहीं ऐसा परिधान है जो आजीवन तन के साथ रहता है।

गोदना का इतिहास – गोदना के इतिहास की बात करें तो ''मिश्र की मम्मीज'' में गोदना जैसे निशान मिले हैं। भारत की बात करें तो महाभारत काल में श्रीकृष्ण गोदन हारिन का रूप धारण कर राधा को गोदना गोदने गये थे, वैष्णव संप्रदाय में भी इसका प्रचलन होता आया है। छत्तीसगढ़ के रामनामी संप्रदाय में पूरे शरीर में राम-राम नाम का प्रयोग एक सामाजिक प्रतिकार के रूप में आरंभ किया गया। दलित होने के कारण उन्हें मंदिर प्रवेश एवं शास्त्र पाठन की वर्जना थी।

अतः विरोध स्वरूप अपने समुचे शरीर में राम नाम शब्द का गोदना करना आरंभ कर दिया। आज भी अल्प मात्रा में ही सही पर इस परिपाटी का पालन कर रहा है। यह प्रथा धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, वैज्ञानिक व ऐतिहासिक तथ्यों से जुड़ी हुई है।

गोदना का शाब्दिक अर्थ – गोदना का शाब्दिक अर्थ चुभाना है, किसी सतह को बार-बार छेदना अर्थात् अनेक बार छिद्रित करना, इसे अंग्रेजी में टैटु कहते हैं।

जनजातिय समुदाय में गोदना – गोदना सौंदर्य वृद्धि का तो विशिष्ट साधन माना ही गया है, लेकिन इसके साथ ही कई पुरातन मान्यताएं, लोक विश्वास, कुल देवी-देवता प्रतीक आदि भी इससे संबद्ध है। गोदने की सत्ता युगों से रही है। असहनीय कष्ट होते हुये भी महिलाएं निरंतर पीढी दर पीढी, गोदना धारण करती है, इसके पीछे निश्चित रूप से मनुष्य की कोई न कोई इच्छा रही है, जिसकी तलाश मनुष्य को शुरू से है। ''गोदने कामेच्छा की पूर्ति न कोई इच्छा रही है, जिसकी तलाश मनुष्य को शुरू से है, गोदने कामेच्छा की पूर्ति करने वाले, सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ाने वाले, जादुई प्रभाव रखने वाले, आत्मिक सुख प्रदान करने वाले, परा शक्तियों को सुरक्षा के लिये रिझाने वाले, काया को निरोग रखने वाले, सौंदर्य की वृद्धि करने वाले, गहनों के अभाव में आभूषणों की मानसिक पूर्ति करने वाले, पृथ्वी से लगाकर स्वर्ग तक चुम्बकीय आकर्षण रखने वाले, प्रजनन की कामना पूर्ति करने वाले, नृत्य संबंधी अवधारणाओं को व्यक्त करने वाले, प्रकृति और मनुष्य के ऐतिहासिक मिथकीय संबंधों को उजागर करने वाले, शारीरिक सज्जा के अमिट आदिम चिन्ह हैं'' **तिवारी डॉ. शिवकुमार-म.प्र. की जनजातीय संस्कृति पृ. २२६**

बैगा समुदाय में गोदना–बैंगा जनजाति संसार में सबसे अधिक गोदना प्रिय हैं। बैगा स्त्रियां गोदना को स्वर्गिक अलंकरण मानती है। शरीर का कोई ऐसा हिस्सा नहीं है (गुप्तांगों को छोड़कर) जहां बैगा स्त्रियां गोदना न गोदवाती हो बैगा स्त्रियों की मान्यता है कि यही गोदना बैगाओं की जातीय पहचान कायम रखते हैं। यदि कोई नारी यहां गोदना नहीं गोदवती है, तो भगवान के सामने उसे सब्बल से गोदवाना पड़ता है। यही चिन्ह हमारे साथ रहते हैं।

बैगा आदिवासियों में गोदना गोदवाने वाले स्त्रियों का मान बढ़ जाता है। अधिक गोदनाधारी नारी का ससुराल में विशेष सम्मान होता है। गोदना नहीं गोदवाना लड़की के पीहर के परिवार की निर्धनता का प्रतीक है। गोदना गोदवाना बैगा स्त्री अपना धर्म समझती है। गोदना उसके शरीर की शोभा है। ८ वर्ष की उम्र में बैगा स्त्रियां गोदना गोदवाना शुरू करती हैं और विवाह के बाद तक गोदवाती रहती है। शरीर के सारे गोदने एक साथ नहीं गोदवाये जाते हैं।

गोदना का आरंभ/उद्देश्य– गोदना का आरंभ मूल रूप से दो उद्देश्यों के कारण हुआ। प्रथम कारण था–गोदना के प्रतिरोधक अभिप्रायों का अलंकरण करके प्रतिकूल अभिचारों और जादू-टोन्हें से सुरक्षात्मक कवच का निर्माण करना और दूसरा कारण प्रजनन शक्तियों को जागृति कर मातृत्व को अनुनेय बनाना। अतः यह स्पष्ट हो जाता है कि गोदना का आरंभ शारीरिक अलंकरण के उद्देश्य से कदापि नहीं हुआ था।कालान्तर में अवश्य ही गोदना अंकन में सौंदर्य परक दृष्टिकोण का समावेश होने लगा और उसका विकास अलंकरण के रूप में स्थापित हो गया।

बस्तर में अबुझमाड़िया जनजाति की स्त्रियां अपने संपूर्ण चेहरे एवं वक्ष स्थल पर आड़ी-तिरछी सीधी रेखाओं को गोदना अभिप्रायों के रूप में इस प्रकार अंकित करवाती है कि उन्हें अलंकरण तो माना ही नहीं जा सकता। उनके चेहरे पर इस प्रकार के गोदनों से विकृत किये हुये अधिक मालुम पड़ते हैं। इसी प्रकार से बैगाचक की बैगा जनजाति की स्त्रियां भी अपने मस्तक पर आड़ी-तिरछी रेखाओं के बीचों-बीच **"व्ही"** आकार के चूल्हे का अभिप्राय गोदवाती हैं।

गोदना के क्रम – ८ वर्ष की उम्र में बैगा स्त्रियां गोदना आरंभ करती है और विवाह के बाद तक यह क्रम निरंतर जारी रहता है। शरीर के सारे गोदने एक साथ नहीं गोदवाये जाते हैं। कपाल, हाथ, पीठ, जांघ, पछाड़ी और अंत में छाती पर गोदना का कार्य होता है। बरसात को छोड़कर किसी भी मौसम में गोदवाये जाते हैं। प्रत्येक जनजाति में मस्तक के स्वीकृत गोदनों के अलग-अलग रूपाकार उनके पूर्व आदिम समूह के सदस्य होने के नृजातिय चिन्ह होते हैं। विशेषकर गोंड़, बैगा और भारिया में **"व्ही"** कोंदर में खड़ी लकीर और बिंदु के रूपाकार गोदवाना अनिवार्य माना गया है।

कपाड़ गोदाय – ८ साल की उम्र में कपाल पर भृकुटी के बीचों-बीच **"व्ही"** आकार का चुल्हा तीन टिपका खड़े बेन्डा और आड़े बेंडा गुदवाते है। माथा के गोदना पूरा हो जाने के बाद गोदने वाली बदनीन को शेर सामान महलोन के पत्ता दाल, हल्दी, नमक, मिर्च, कोदई और एक रूपये का सिक्का नेंग के रूप में दिया जाता है। बदनीन उसे आशीर्वाद देती है।

पुखड़ा गोदाय – १५–१६ साल के उम्र में पुखड़ा (पीठ) पर गुदवायी जाती है। पीठ पर चकमक, टिपका, साकल, झेला, बांहके पीछे, आगक, टिपका, मछली कांटा, बेंडा, झेलाके गुदने गोदे जाते है।

जांघ गोदाय – पुखड़ा के गुदने सुखने के बाद २-४ महीने में जांघ के गुदने गुदवाये जाते है। जांघ के गुदने विवाह से पूर्व गुदवाना अनिवार्य हैं बदनीन पैर के ऊपर टखने से शुरू कर जांघ की ओर गोदना शुरू करती है।

पछाड़ी गोदाय – जांघ गुदाय ठीक होने के बाद जांघो के आगे वाले भाग को गोदा जाता है। इसमे झेला, टिपका, केकड़ा, मछली कांटा, आदि उकेरे जाते है।

छाती गोदाय – स्तनों को छोड़कर छाती पर टिपका, फूल आदि गुदवाये जाते है। छाती में गोदना विवाह के उपरांत भी गुदवाये जाते है।

पोरी गोदाय – कोनी से लेकर हाथ के पोरो तक की गुदवाई भिन्न होती है। हाथ मे चकमक, सांकल, झेला, मछली कांटा, आदि अवश्य गुदवाया जाता है। पूरे शरीर की गुदवायी में बदनिन को करीब २०० रूपये प्राप्त हो जाता है। इतना कष्ट प्रद अलंकरण, विश्व की किसी भी जनजाति में नही होगा, फिर भी गुदना अलंकरण , अपने विविध आलेखनों में एक गहरी सौन्दर्य भावना एवं आस्था को संजोए हुये है। उनकी ऐसी धरणा है कि गुदना गुदवाने से गठिया वात तथा चर्म रोग नही होते है''।[२] **चौरसिया डॉ. विजय प्रकृति पुत्र बैंगा पृ. ११८**

'' शरीर में गोदने के अंकन जनजातियों के गुण, स्वभाव, और सामाजिक उत्कृष्टता के आधार पर स्वीकृत किया गया है, हाथ पर **"कुआँ"** जल का प्रतीक है, अंगूठे की जड़ में 'बिच्छू' प्रायः सभी स्त्रियां गुदवाती है। बिच्छू के अंकन मे एक खास बात देखने मे आती है, वह है उसका डंक उठाकर चलना, बिच्छू डंक प्रजनन का प्रतीक है, बिच्छू को देखकर मन में काम भावना जागृत होती है।[३] **तिवारी डॉ.शिवकुमार म.प्र.की जनजातियाँ पृ. ७०**

इस तरह के गुदने प्रागैतिहासिक गृहचित्रों में मिलते है। कलाई के ऊपर पोहचें में, सीता रानी, सीता-राम रसोई, मुकुट चुल्हा, देवली, रथ, आम मोर, मोर मुकुट, ढ़ोल और पुरूष रथ, रामलखन, सीता-राम जोड़ी, चन्द्रमा, वृक्ष, चिड़िया तोता, ऊँट, मोर-जोड़, भैसा सींग आदि के गुदने लिखे जाते है। आश्चर्य की बात यह है कि राम सीता रसोई नामक गुदना प्रायः सभी जनजातियों और जातियों की गुदना आकृतियों में प्रचलित है। राम और सीता का संबंध, लगभग सभी जनजातियों से रहा है, उन्होने उन्हे संगठित कर उनके मनोबल को बहुत उंचा उठाया था। इस कारण से सम्मान स्वरूप अपने शरीर पर गोदना का अंकन कराते है। अपने ईस्ट के प्रति इससे बड़ी और क्या श्रद्धा हो सकती है।''[४] **शर्मा, टी.डी., बैंगा, पृ. ६६** गोदने को स्त्रियों अनमोल थाती मानती है जो उनसे छीनी न जा सकती है और न असावधानीवश उनसे खो सकती है । ये भी मान्यता है कि ''ये चिन्ह मृतक की आत्मा से नये शरीर में पूर्नस्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है।

बैंगा पुरूष -स्त्रियों की तुलना में बैगा पुरूषों में गोदना का प्रचलन कम है, फिर भी बैगा पुरूष अपने हाथ पर चंद्रमा जैसी आकृति गुदवाते है, बांह पर बिच्छू बनवाने का चलन है।

गोदना कैसे तैयार होता है-''गोदना बनाने के लिए परंपरागत रूप से बबूल का कांटा इस्तेमाल में लाया जाता था, आजकल सुइयॉ इस्तेमाल होती है गोदना की स्याही के लिए भिलवा का रस, मालवन का पेड़ का रस, काला तिल और रमतिला का तेल का मिश्रण, काजल, किंग कोबरा, (डोमी सॉप) की खाल की राख, को एक साथ तेल मे मिलाकर घोल तैयार करते है। गोदना के बाद गोबर व सुपारी के पानी से धुला जाता है। सिसमे सुजन कम होता है। हल्दी व तेल का लेप लगाकर मिश्रण करती है।''[५] **पाण्डेय डॉ. निलिमा म.प्र. लोकराज समाचार पत्र अंक लोकमंच**

गोदना गुदाई रस्म के कुछ नियम – गोदना गोदाई का कार्य देवार स्त्रियों के द्वारा प्रायः किया जाता है। बांदी जाति की बदनिन स्त्रियां भी गोदना गोदती है। गांव मे फेरा लगाते हुए एक गांव से दुसरे गांव की ओर जाते है। गोदना के समय प्रायः पराये पुरूष का देखा जाना वर्जित है, यदि कोई पुरूष देख ले तो ऐसी मान्यता है कि, वह कभी-भी मृग का शिकार नही कर पायेगा उसकी शक्ति क्षिण हो जायेगी। बदनिन गोदना शुरू करने से पूर्व टोना-टोटका दुर करने का मंत्र पढ़कर ही गोदना शुरू करती है ताकि, कोई पराशक्ति उसके शरीर में ना समा जाये। प्रायः गोदना घर से बाहर जंगल में किसी पेड़ के छाव में किया जाता है। लड़की घर से लोटा मे पानी भर के पेड़ के नीचे छांव में आते है तथा सुबह ८ बजे से १२ बजे के बीच अमुमन गोदना कार्य किया जाता है। नियमानुसार बदनिन को शेर सामाग्री कोदई, चावल, हल्दी तथा कुछ रूपय नेंग के रूप में देने की परम्परा है।

आज कल दो प्रकार के गोदना का चलन प्रायः देखने को मिलता है एक जिसमे चार से पांच सुई को एक समूह मे बांधकर पतले आकार की गोदना आकृति बनाई जाती है तथा दुसरा, दस से बारह सुई वाला गोदना जिसमें गोदने की आकृति मोटा तथा उसका चुभन भी बहुत ही दर्दनाक होती है। आज कल मेले या हाट बाजार में **(ड्राई सेल)** चलित मशीनों द्वारा भी शहरों में टैटु के रूप में चलन देखने को मिलता है। बैंगा स्त्रियां प्रायः मशीन में गोदना पसंद नही करती हैं। गोदना के पश्चात शरीर के उस अंग को पानी से साफ धोना अनिवार्य होता है यदि स्याही लगा हो तो उसके पक जाने की सम्भावनाएं बना रहता है। पानी से साफ करने के बाद गोबर से बार-बार धुलाई किया जाता है। जिससे गोदना का दर्द तथा सुजन आने की संभावना नही होती। गोबर से धुलाई के पश्चात रमतिला को तेल व हल्दी का लेप उसके शरीर में लगाया जाता है। स्त्रियों को विश्राम करना आवश्यक हो जाता है।

निष्कर्ष – बैगा समुदाय में गोदना शिल्प का अंकन चिरकाल से चली आ रही परंपरा है, जिसकी प्रासंगिकता को वर्तमान समय में बनाये रखना चुनौती पूर्ण है। सरकार के द्वारा भी वनांचल में रहने वाले इन महिलाओं को रोजगार से जोड़कर रोजगारोन्मुखी प्रशिक्षण कार्यक्रम में हस्तशिल्प विकास बोर्ड द्वारा किये जा रहे प्रयास सराहनीय है, इसमें प्रशिक्षण के माध्यम से साड़ी, सलवार, टेबल क्लाथ, रूमाल, चुनरी इत्यादि में गोदना का चित्रकारी के रूप में उकेरे जा रहे हैं, जिसका राज्योत्सव जैसे आयोजनों में लोगों ने काफी सराहना की है।

संदर्भ सूची

१. तिवारी, शिवकुमार एवं शर्मा, डॉ. कमल - म.प्र. की जनजातियां, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल सं. २००९ पृष्ठ ७०
२. चौरसिया, डॉ. विजय, प्रकृति पुत्र बैंगा, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल सं. २००९ पृष्ठ ११८
३. तिवारी, शिवकुमार, म.प्र. की जनजातिय संस्कृतिं, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल सं. २०१० पृष्ठ २२४
४. शर्मा, टी.डी., बैंगा, छ.ग. राज्य हिन्दी ग्रंथ अकादमी, रायपुर सं. २०१२ पृष्ठ ६६
५. पाण्डेय, डॉ. निलिमा, लोकराज समाचार पत्र, अंक लोकमंच, दिनांक ५ सितम्बर २०२१